Vol 5 Issue 6 March 2016

ISSN No : 2249-894X

Monthly Multidisciplinary Research Journal

Review Of Research Journal

Chief Editors

Ashok Yakkaldevi
A R Burla College, India

Flávio de São Pedro Filho
Federal University of Rondonia, Brazil

Ecaterina Patrascu
Spiru Haret University, Bucharest

Kamani Perera
Regional Centre For Strategic Studies, Sri Lanka

Welcome to Review Of Research

RNI MAHMUL/2011/38595 **ISSN No.2249-894X**

Review Of Research Journal is a multidisciplinary research journal, published monthly in English, Hindi & Marathi Language. All research papers submitted to the journal will be double - blind peer reviewed referred by members of the editorial Board readers will include investigator in universities, research institutes government and industry with research interest in the general subjects.

Regional Editor

Manichander Thammishetty
Ph.d Research Scholar, Faculty of Education IASE, Osmania University, Hyderabad.

Advisory Board

Kamani Perera
Regional Centre For Strategic Studies, Sri Lanka

Ecaterina Patrascu
Spiru Haret University, Bucharest

Fabricio Moraes de AlmeidaFederal
University of Rondonia, Brazil

Anna Maria Constantinovici
AL. I. Cuza University, Romania

Romona Mihaila
Spiru Haret University, Romania

Delia Serbescu
Spiru Haret University, Bucharest, Romania

Xiaohua Yang
University of San Francisco, San Francisco

Karina Xavier
Massachusetts Institute of Technology (MIT), USA

May Hongmei Gao
Kennesaw State University, USA

Marc Fetscherin
Rollins College, USA

Liu Chen
Beijing Foreign Studies University, China

Mabel Miao
Center for China and Globalization, China

Ruth Wolf
University Walla, Israel

Jie Hao
University of Sydney, Australia

Pei-Shan Kao Andrea
University of Essex, United Kingdom

Loredana Bosca
Spiru Haret University, Romania

Ilie Pintea
Spiru Haret University, Romania

Mahdi Moharrampour
Islamic Azad University buinzahra Branch, Qazvin, Iran

Titus Pop
PhD, Partium Christian University, Oradea,
Romania

J. K. VIJAYAKUMAR
King Abdullah University of Science & Technology,Saudi Arabia.

George - Calin SERITAN
Postdoctoral Researcher
Faculty of Philosophy and Socio-Political Sciences
Al. I. Cuza University, Iasi

REZA KAFIPOUR
Shiraz University of Medical Sciences
Shiraz, Iran

Rajendra Shendge
Director, B.C.U.D. Solapur University, Solapur

Nimita Khanna
Director, Isara Institute of Management, New Delhi

Salve R. N.
Department of Sociology, Shivaji University, Kolhapur

P. Malyadri
Government Degree College, Tandur, A.P.

S. D. Sindkhedkar
PSGVP Mandal's Arts, Science and Commerce College, Shahada [M.S.]

Anurag Misra
DBS College, Kanpur

C. D. Balaji
Panimalar Engineering College, Chennai

Bhavana vivek patole
PhD, Elphinstone college mumbai-32

Awadhesh Kumar Shirotriya
Secretary, Play India Play (Trust),Meerut (U.P.)

Govind P. Shinde
Bharati Vidyapeeth School of Distance Education Center, Navi Mumbai

Sonal Singh
Vikram University, Ujjain

Jayashree Patil-Dake
MBA Department of Badruka College Commerce and Arts Post Graduate Centre (BCCAPGC),Kachiguda, Hyderabad

Maj. Dr. S. Bakhtiar Choudhary
Director,Hyderabad AP India.

AR. SARAVANAKUMARALAGAPPA
UNIVERSITY, KARAIKUDI,TN

V.MAHALAKSHMI
Dean, Panimalar Engineering College

S.KANNAN
Ph.D , Annamalai University

Kanwar Dinesh Singh
Dept.English, Government Postgraduate College , solan

More.....

Address:-Ashok Yakkaldevi 258/34, Raviwar Peth, Solapur - 413 005 Maharashtra, India
Cell : 9595 359 435, Ph No: 02172372010 Email: ayisrj@yahoo.in Website: www.ror.isrj.org

Review of Research
International Online Multidisciplinary Journal

ISSN: 2249-894X Impact Factor : 3.1402(UIF) Volume - 5 | Issue - 6 | March - 2016

संत साहित्य में आर्थिक असमानता संबंधी लोक चेतना की वर्तमान परिप्रेक्ष्य में उपादेयता का अनुशीलन

सत्येन्द्र प्रकाश
(विषय हिन्दी)
अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा(म प्र)

प्रस्तावना –

मानव जीवन जीवन के हर क्षेत्र में धन का बड़ा महत्व है। किसी भी देश, समाज एवं वस्तु के आदान–प्रदान में धन नितान्त आवश्यक है। किसी देश की आर्थिक मजबूती ही वहाँ के बहुमुखी विकास में सहायक सिद्ध होती है। औचित्य की दृष्टि से आर्थिक मजबूती भी समाज में समान रूप से वितरित होनी चाहिए। इससे सभी का जीवन सुखमय एवं मंगलमय होगा, लेकिन आज सम्पत्ति समाज में असमान रूप से वितरित है। जो धनी वर्ग है वह और भी धनाढ्य एवं सम्पन्न होता जा रहा है और जो निर्धन एवं भोजन के लिए मुंहताज है, वह दिनों दिन अपने भाग्य को कोसता हुआ छटपटा रहा है। समाज की यह विषमता किसी भी दृष्टि से वांछनीय नहीं। धन का यह व्यतिक्रम समाज में शोषण की प्रवृत्ति को बढ़ावा देता है। वित्तेषणा एक ऐसी भावना है जिसकी तृप्ति कभी सम्भव नहीं है। जो धनी है, उनकी तृष्णा उन्हें और अर्थलोलुप बना देती है। फलतः समाज का शोषण और दोहन उत्तरोत्तर बढ़ता जाता है। अनाचार को बढ़ावा मिलता है और निर्धन वर्ग को इसकी सजा भुगतनी पड़ती है।

आर्थिक असमानता से मानवता में कमी आती है। इससे समाज के मात्र धनी वर्ग का ही मंगल होता है, लोकमंगल नहीं। 'लोकमंगल' के लिए आर्थिक बराबरी बेहद जरूरी है। ऐसे धन–मदांधों के मन में अन्य लोगों के प्रति उपेक्षा और हीनता का भाव होता है। वे धन एवं द्रव्य के बल पर अपने को समाज का नियामक समझते हैं। इससे उनमें शासक की भावना जन्म लेती है और इसी धन संचय की भावना के कारण दिन–प्रतिदिन शोषण की प्रवृत्ति बढ़ती जाती है। इस प्रकार शोषण का यह सिलसिला बराबर चलता रहता है। फलतः शोषित वर्ग को अर्थाभाव के कारण कहीं से भी सम्मान नहीं मिलता। उसे दर–दर भटकना पड़ता है। धनी और गरीब की यह खाईं युगों से चली आ रही है और आज भी कायम है। आज हर क्षेत्र में शोषण हो रहा है। चाहे मिल मालिक या जमींदार–साहूकार हों, सभी किसान या

मजदूर के आर्थिक शोषण की प्रक्रिया में संलग्न हैं। श्रमिकों के अथक परिश्रम से ही मिल मालिक या जमींदार मालामाल होता है। उसकी सारी सुख–सुविधाएँ श्रमिकों के श्रम पर निर्भर हैं। फिर भी मिल मालिकों और जमींदारों–साहूकारों की भावना श्रमिकों कामगारों तथा अन्य कर्मचारियों के प्रति अच्छी नहीं होती। परिणाम यह होता है कि इनके द्वारा लगातार विद्रोह तथा विरोध होते रहते है। इसी प्रकार सारे शासकीय अथवा अषासकीय कर्मचारी भी शासकीय नीतियों के कारण आर्थिक असमानता के षिकार हमेंषा रहे हैं। जबकि ये सभी तथाकथित छोटे कर्मचारी भी राष्ट्र निर्माण में अपना उतना योगदान देते हैं। जितना धनी वर्ग कभी नहीं देता।

संतकाल के समान वर्तमान परिवेष में केवल भारत में ही नहीं वरन् संपूर्ण विष्व में आर्थिक असमानता का वातावरण भयावह गति से बढ़ता जा रहा है। इसके कारण यह समाज पर अपनें भीषणतम् प्रभाव डाल रहा है। वैष्विक समुदाय में उत्पन्न अधिकांष समस्याओं के मूल में आर्थिक असमानता ही है चाहे वह समस्या वैष्विक आतंकवाद की हो या धार्मिक उन्माद की हो अथवा राजनैतिक उथल पुथल की हो। आज गरीब आर्थिक रूप से पिछ़ड़े हुए निम्न वर्गीय बच्चों तथा लोगों को धन का लोभ दिखाकर बहलाना अत्यंत आसान हो गया है। इसी के चलते ये आतंकवादी संगठन राजनैतिक विद्रोही तथा धार्मिक उन्मादी इन लोगों को बहकाकर इन मानवविरोधी कार्यों में लगा देते है और ये लोग धनार्जन के लिये इन कार्यो को करने लगते है। आज ये कुछ गरीब तथा अषिक्षित लोग धन के लोभ के कारण ही आतंकवाद की भट्टी में झोंक दिये गये हैं। कुछ लोग सामाजिक अपराधों जैसे दुष्कर्म चोरी हत्या लूटपाट अपहरण आदि में लग जाते हैं तथा कुछ लोग धार्मिक उन्माद के वषीभूत होकर कभी जेहादी तो कभी आई. एस. जैसे संगठनों के साथ जुड़कर अराजकता फैलाते हैं। इन सभी समस्याओं के मूल में बहुधा आर्थिक असमानता ही रहती है। जिन्दा रहने के लिए अन्न, वस्त्र, आवास आदि की सभी को जरूरत पड़ती है और ये सब अर्थनिष्ठ हैं। आज किसी देश की गिनती उसकी आर्थिक मजबूती के आधार पर होती है। आर्थिक मजबूती ही किसी देश के बहुमुखी विकास में भूमिका अदा करती है। आर्थिक विपन्नता किसी भी राष्ट्र के लिए घुन है। अस्थिरता और असहिष्णुता के इन तमाम विस्फोटों के पीछे मुख्य कारण आर्थिक है। हमारी आर्थिक स्थिति की विडम्बना बढ़ती हुई गरीबी नहीं, बढ़ता हुआ असंतुलन है। इस असंतुलन का कारण छीना–झपटी की राजनीति है जिसने सारे देश में छीना झपटी की मानसिकता पैदा कर दी है। आज कोई भी व्यक्ति अपनी आर्थिक उपलब्धि को अपनी योग्यता से जोड़कर नहीं देख पाता। उसे यही नजर आता है कि यदि उसे आर्थिक रूप से अभावग्रस्त नहीं रहना है तो उसे इस छीना–झपटी की शर्तों के अनुसार अपने लिए जो कुछ भी हथिया लेने के लिए जूझ पड़ना चाहिए। एक जोंक की तरह देश के रक्त प्रवाह से चिपक कर अपने मुँह भर लहू चूस लेना चाहिए। इस दृष्टि को अपना सकने में असमर्थ और सचमुच मेहनत करके अपनी योग्यता का फल ढूंढ़ने वाले व्यक्ति की मायूसी इससे और बढ़ जाती है। आज की व्यापक तोड़फोड़ के मूल में यही आर्थिक अराजकता है। अभी आबादी आज भी गरीबी की रेखा के नीचे दो जून के खाने के लिए तरसती है और निरक्षरता के समुद्र में पशुवत जी रही है। मुट्ठीभर लोगों का देश मे संसाधनों पर अधिकार है। हरिजन और आदिवासी जो कि पूरी देश की आबादी का आधा हिस्सा है, सबसे दयनीय स्थिति में है। स्वाधीनता के 52 वर्ष बाद, आज भी देश में एक लाख से अधिक गांव ऐसे हैं, जिनके पीने के पानी की व्यवस्था नहीं है। या तो मीलों दूर से महिलाओं को पानी लाना पड़ता है या फिर जानवर और आदमी एक ही तालाब या जोहड़ का पानी पीते हैं और उसी में नहाते धोते हैं। आज भी ऐसे गांव हैं जहाँ बन्धुआ मजदूर गोबर को धोकर उससे निकले अनाज के दानों पर अपनी गुजर करते हैं जबकि उन्हीं की जाति के नेता उनके नाम पर मुगलिया बादशाहों जैसे ऐशो आराम का जीवन बिताते हैं। कैसी विडम्बना है कि एक ओर सड़कों पर कारों की भीड़ बढ़ती जा रही है और दूसरी ओर आर्थिक उदारीकरण की नीति के चलते, हमारे देश की 16 प्रतिशत आबादी की प्रति व्यक्ति आय 15 रुपये रोज आंकी गयी है। लोकतंत्र का आधार है मानव जीवन का मूल्य और व्यक्ति–व्यक्ति के बीच समानता, किन्तु हमारा सामाजिक जीवन और चिन्तन आज भी सामन्तवादी है आज भी मनुष्य के जीवन की अलग–अलग कीमतें लगती हैं। कहीं बच्चे का प्रतिदिन का जब खर्च 500 रुपये है तो कहीं 200 रुपये में आदिवासी माताएँ अपने बच्चे को बेचने पर मजबूर हो जाती हैं। आर्थिक शोषण की नीति हमारी सरकार की भी है। उसकी भी प्रवृत्ति जन–सामान्य के हित की नहीं है। हर दिन नये–नये कर लगाए जाते हैं और कीमतों में वृद्धि की जाती है। सरकार का ध्यान प्रायः निम्न वर्ग पर नहीं होता। वह हर समय पूंजीपतियों एवं व्यापारियों के विषय में सोचा करती है। क्योंकि चुनावी दौर में उन्हीं से उसे धन मिलता है। सरकार की तरफ से बाह्य प्रदर्शन एवं दिखावा तो ऐसा किया जाता है कि अमुक नौकरी या व्यवसाय में इतनी प्रतिशत सीटें निम्नवर्ग के लिए सुरक्षित हैं, किन्तु यह मात्र कागजी ही होती हैं। रिश्वत अथवा अन्य तरीकों आदि से नियुक्ति तिकड़मबाजों की होती है। खगोलीकरण और उदारीकरण की नीतियों के चलते आज गरीब और भी गरीब होता जा रहा है और अमीर की अमीरी आसमान छू रही है। उसने सुख सुविधाओं का अम्बार लगा रखा है। इतनी आर्थिक गैर बराबरी शायद पहले कभी नहीं थी।

डॉ. सुभाष कश्यप ने ठीक ही लिखा है – ''सारी व्यवस्था क्षत विक्षत हो गयी, टूट फूट गयी। भ्रष्टाचार और लूट खसोट की होड़ में सभी दलों के नेताओं ने अपनी तिजोरियां भरी, विदेशी बैंकों के खातों में भारी रकमें जमा कीं, घोटाले पर घोटाले किये, अपनी भावी पीढ़ियों का भविष्य सुरक्षित किया और जब देश दिवालियेपन के कगार पर आ खड़ा हुआ तो अपने खर्चे और ऐशो आराम कम करने के बजाय राष्ट्र की अस्मिता को अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व बैंक, बहुराष्ट्रीय कम्पनियों और विदेषियों के हाथों गिरवी रख दिया। अपने विशाल बाजार को ही विदेशी कम्पनियों द्वारा उपभोग की सामग्रियाँ बेचने और शोषण करने के लिए मुक्त कर दिया।'' यह तो राजनीतिज्ञों की बात हुई। यहाँ तो हर क्षेत्र में भ्रष्टाचार फैला हुआ है। जिसकी मार अन्ततः आम गरीब आदमी को ही झेलनी पड़ती है।

संत समुदाय लगातार ही इस आर्थिक असमानता का विरोधी रहा है। सन्तों के समय भी आर्थिक विषमता थी और लोगों का आर्थिक शोषण किया जाता था, जिसका सन्तों की वाणियों में जगह–जगह जिक्र मिलता है। यही कारण है कि उन्होंने अपने समाज में आर्थिक समता लाने के लिए अतिशय धन की इच्छा को माया कहकर निन्दा की और बताया कि धन–वैभव किसी के साथ नहीं जाता। सन्त सुन्दरदास की इन पंक्तियों में देखा जा सकता है –

'होयगो हिसाब तब मुख ते न आवे बात।
सुन्दर कहत लेखो लेत राई राई को।।'

संतों ने अपनी वाणी में हमेषा लोकमंगल की भावना का प्रचार किया है। इस आर्थिक असमानता को दूर करनें के लिये स्वयं भी

कार्य करते थे तथा लोगों को भी जीविकोपार्जन हेतु आवष्यक धनार्जन करने हेतु कहा है। कबीर, रैदास, दादू आदि सन्त व्यवसाय से शिल्पी थे। कबीर कपड़ा बनाते थे, दादू धुनिया थे, इस प्रकार के कार्यो से उनकी आर्थिक दशा संभली जिसने उनमें आत्म विश्वास के उस तेज को जन्म दिया जिसके बल पर वे जातिवादियों एवं कर्मकाण्डियों, ब्राह्मणों एवं काजी, मुल्ला आदि को चुनौती दे सके। आगे वे कहते हैं कि इस प्रगति से शिल्पियों की हालत सुधरी परन्तु पुजारियों की जो कथावाचन जैसे कार्य से अर्थार्जित करते थे, स्थिति में गिरावट आयी क्योंकि सन्तों की वाणी ने उनके इस धन्धे को बहुत कुछ चौपट कर दिया। वहीं आज आर्थिक विषमता की दूसरी प्रवृत्ति पनपी है जिसमें शिल्पी नष्ट हो रहे हैं, श्रमिकों, मेहनतकश लोगों की हालत सुधरने की जगह बिगड़ रही है। उनके श्रम एवं उत्पाद आयातित उत्पादों का मुकाबला नहीं कर पा रहे हैं। किसान की फसलें चौपट करने वाले बीज बाजार में आ गये हैं। आज भी कृषक सामूहिक आत्महत्या करने को विवश हो रहे हैं। धनी और गरीब की यह खाई युगों से चली आ रही है और आज भी कायम है।

''प्रभुसत्ता और सामन्ती व्यवस्था के शोषण के कारण कबीर ने बार–बार असुरक्षा और आश्रयहीनता का तीखा अनुभव किया है – 'बाबा अब न बसऊंयहि गांव' जैसे पदों में। कबीर की वाणी में कई स्थान पर ऐसे प्रसंग हैं जो तत्कालीन व्यवस्था की नृशंसता पर प्रहार भी करते हैं। दैनिक जरूरतों के लिए पुत्र–पुत्रियों तक को गिरवी रखने की व्यवस्था जिस समाज में हो उससे कबीर का तालमेल बैठना असम्भव था। गरीबी के भयावह दृश्य चित्र अनेक बार कबीर की साखियों और सबदों में आये हैं।''

निरधन आदर कोइ न देई। लाख जतन करें ओहु चित्त धरेई।
जो निरधन सरधन के जाई। आगे बैठा पीठ फिराई।।

वस्तुतः यह केवल संत समाज की अपनी पीड़ा नहीं बल्कि आम आदमी की पीड़ा थी जो बार–बार उनका पीछा करती थी। इसके खिलाफ समाज को इकट्ठा करने के लिए उन्होंने समाज को कर्म करने की प्रेरणा दी। खुद अपनें अपनें व्यवसाय करते रहे। पारिवारिक और आर्थिक कष्ट को दूर करने के लिए सन्तों, ने दूसरों पर आश्रित या परजीव रहने वालों का विरोध किया। अतिशय धन संग्रह की प्रवृत्ति का उन्होंने विरोध किया। धन–पशुओं को समझाते हुए सन्त कवि सुन्दरदास कहते हैं कि तुम चाहे जितना भी भण्डार कर लो, तुम्हारी धन की तृषा कभी शान्त होने वाली नहीं है। यह सारा धन एवं सुन्दर शरीर सभी कुछ काल कवलित हो जायेगा–

सूझत नाहिन कालहि तो सिर, मारि के थाम मिलाइहि माटी।

धन की भूख आज इतनी बढ़ गयी है कि आदमी तुरन्त धनी बनने की मानसिकता के चलते अच्छे बुरे सभी कार्य कर रहा है। यों तो हर क्षेत्र में आचरण की भ्रष्टता दिखायी देती है, किन्तु आर्थिक भ्रष्टाचार का वजूद देखते बनता है। आज भ्रष्टाचार का अर्थ ही हो गया है– आर्थिक गबन, घोटाला, रिश्वत।

ऐसे में सन्तों की अपरिग्रह, इन्द्रिय–निग्रह, धन–वैभव की नश्वरता, सादा जीवन, संयमित जीवन, परोपकारिता, दया, भ्रातृत्व आदि की प्रेरणाप्रद वाणियाँ बहुत मौंजूद हैं, जिन्हें जीवन में आचरित करने से ही आर्थिक शोषण, भ्रष्टाचार, भूख–प्यास, गरीबी, ऊँच–नीच की दुर्भावना पर नियंत्रण किया जा सकता है और तभी मनुष्य मात्र का कल्याण सम्भव है। वास्तव में इच्छाओं का अन्त नहीं है; अतः कबीर का यह कथन उनके समय में तो प्रासंगिक था ही वर्तमान संदर्भ में तो और भी प्रासंगिक और उपयोगी बन पड़ता है –

उदर समाता अन्न लै, तनहिं समाता चीर।
अधिकहि संग्रह ना करै, ताका नाम फकीर।।

प्रो. मैनेजर पाण्डेय का मन्तव्य उचित ही है, ''भक्ति आन्दोलन की निर्गुण धारा की कविता भारत की श्रमजीवी जनता के जीवन की वास्तविकताओं और आकांक्षाओं की कविता है जिसके प्रवर्तक और प्रतिनिधि कवि कबीर हैं। वे बार–बार कहते हैं, मैं जुलाहा मैं जुलाहा। उनकी कविता का तानाबाना भी कहता है कि वह एक बुनकर की कविता है। उसका पूरा काव्य लोक एवं जुलाहे के जीवन यथार्थ के अनुभवों से बुना हुआ है। यहाँ तक कि कबीर की भक्ति भावना के अध्यात्म लोक में भी उन्हीं अनुभवों की बनुत है –

उलटि जाति कुल दोऊ बिसारी। सुन्न सहज महिं बुनत हमारी।।
हमराझगरा रहा न कोऊ। पंडित मुल्ला छांड़े दोऊ।
बुनि–बुनि आप आप पहिरावों। जहं नहीं आप तहाँ हवै गावों।
पंडित मुल्ला जो लिखि दीया। छांड़ि चले हम कछु न लीया।।

इस प्रकार सन्तों का प्रभाव एक व्यावहारिक गृहस्थ तथा कर्ममय जीवन के माध्यम से समाज के लिए चुनौती रहा है।समाज की इसी वास्तविकता को कबीरदास ने लक्ष्य किया था और उसे इस प्रकार रेखांकित किया –

'निरधन आदर कोई न देई। लाख जतन करै ओहु चित्त न धरेई।।
जो निरधन सरधन के जाई। आगे बैठा पीठ फिराई।।'

ऐसे ही धन–पशुओं को देखकर सन्त कवि सुन्दरदास ने कहा है कि तुम चाहे जितना भी भण्डार कर लो, तुम्हारी धन की तृष्णा

कभी शांत होने वाली नहीं है। यह सारा धन एवं सुन्दर शरीर सभी कुछ काल कवलित हो जाएगा –

सूझत नाहिन कालहि तो सिर, मारि के थाम, मिलाइहि माटी।

सन्त कबीर की यह वाणी– 'दुर्भभ मानुस जनम है होय न बारंबार' ऐसे ही कर्तव्य से गिरे हुए लोगों को मानव काया का सत्य एवं महत्व समझाती हैं।गरीबों को ब्याज पर रुपया देकर उनसे अत्यधिक रुपया वसूल करना एवं सस्ता अनाज खरीदकर अभाव पैदा करना और उसे महँगे दामों बेचने की यह वणिक प्रवृत्ति ही शोषण है। ऐसी प्रवृत्ति से आर्थिक न्याय की कल्पना नहीं की जा सकती। इस दुष्चक्र में सर्वहारा गरीब ही मारा जाता है, जिसे दो जून की भरपेट रोटी भी मयस्सर नहीं होती। आर्थिक शोषण की इसी प्रवृत्ति को लक्ष्य करके कबीर ने मनुष्य की आवश्यकता का सीमित करते हुए अन्न एवं वस्त्र की सीमा निर्धारित कर दी थी। उनका कथन है –

'उदर समाता अन्न लै, तनहिं समाता चीर।
अधिकहिं संग्रह ना करै, ताका नाम फकीर।।'

सन्तों को तो हैरानी इस बात की है कि धर्म और भक्ति का चोला धारण करने वाले साधु–सन्यासी भी इस प्रवृत्ति से मुक्त नहीं दिखाई पड़ते। धन–संचय की प्रवृत्ति से ग्रस्त साधुओं को लक्ष्य–लक्ष्य सन्त पलटूदास जी ने कहा है –

'करते बट्टा ब्याज कसब है जगत का।
माया में है लीन बहाना भगति का।।
× × ×
सस्ते महै अनाज खरीद के राखते।
महँगी में डारैं बेचि चौगुना चाहते।।

निष्कर्ष

अतः निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि आर्थिक शोषण के विरुद्ध सन्तों ने जो कुछ भी कहा है, वह आज भी युक्तियुक्त है। तत्कालीन समाज की आर्थिक विषमता की ओर सन्तों ने लोगों का ध्यान आकृष्ट किया था। अन्न–धन को जीवन की सीमित एवं मर्यादित आवश्यकता के रूप में उचित ठहराया था। अतिशय संग्रह की भावना से लोगों को आगाह किया था। जिस समाज में संग्रह की यह भावना असीमित एवं अमर्यादित होगी, वहाँ विषमता अवश्यंभावी है। ऐसी स्थिति में इसके उचित वितरण एवं संचय से ही सामाजिक समानता के लक्ष्य को पाया जा सकता है। इस प्रकार आर्थिक शोषण के खिलाफ सन्त–कवियों ने जो कुछ भी कहा, वह आज भी प्रासंगिक एवं युक्तियुक्त है। अगर समाज में लोग अपनी जिम्मेंवारियों को समझकर इस आर्थिक असमानता के विरोध में संत वाणी के अनुसार अनुगमन करें तो काफी हद तक यह दूर हो सकती है। इस असमानता के कम होने से लोग अपना जीवन यापन अच्छे से कर सकेंगे और राष्ट विरोधी तथा समाज विरोधी कार्यो को स्वत ही बंद कर देंगें। सरकार को ऐसी नीतियों पर ध्यान देना चाहिये जिससे ये असमानता कम हो और बढ़े नहीं। लोगों को अधिकाधिक षिक्षित किया जाना चाहिये जिससे उन्हें आसानी से बहकाया न जा सके और ये अपने अच्छे बुरे के बारे में सोच सकें। जैसी सामाजिक चेतना फैलानें का कार्य संतो ने अपनी वाणी द्वारा अल्प संसाधनों से किया तो वर्तमाना मे तो इतने संसाधन है जिनका भरपूर उपयोग करते हुए सामाजिक चेतना फैलाने का कार्य किया जाना चाहिए।

सारांश

सन्तों की यह सदिच्छा कितनी प्रासंगिक है कि उन्हें उतना मिल जाय जिससे वह अपने कुटुम्ब का भरण पोषण कर सकें तथा आये हुए साधु सज्जन को भी उनके यहाँ से भूखा न जाना पड़े। अपनी मेहनत से जो भी प्राप्त हो व्यक्ति को उसी में संतुष्ट रहना चाहिए। यदि आज यह भावना हर व्यक्ति में विकसित हो जाय तो भ्रष्टाचार एवं आर्थिक गैर–बराबरी समाप्त होने में बहुत समय नहीं लग सकता। गांधी जी भी तो शारीरिक श्रम एवं त्याग के साथ खाने की बात कहते थे। उन्होंने ट्रस्टीशिप का सिद्धान्त प्रचारित किया कि धनिकों, पूंजीपतियों को अपने भरण–पोषण के बाद शेष सम्पत्ति ट्रस्ट को सौंपकर गरीबों पर उन्हें कार्य में लगाकर खर्च करनी चाहिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1.कबीर और आज का समय, आलोचना, त्रैमासिक, सहस्त्राब्दी, अंक एक अप्रैल–जून 2000, नई दिल्ली।
2.उत्तर भारत की संत परम्परा – आचार्य परशुराम चतुर्वेदी, प्रकाशक भारती भण्डार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद।
3.कबीर ग्रंथावली – सम्पादक डॉ. श्याम सुन्दरदास, नागरी प्रचारिणी सभा काशी द्वारा प्रकाशित।
4.कबीर वाणी सुधा – सम्पादक डॉ. पारसनाथ तिवारी, प्रकाशन वर्ष 1972, हिन्दी परिसर, प्रयाग विश्वविद्यालय, प्रयाग।
5.चरणदास की वाणी, भाग 1 एवं 2, प्रेस प्रयाग, दयाबोध, दायी वार्ड, जेल प्रेस, जयपुर वेलविडियर प्रिंटिंग वर्क्स, इलाहाबाद,
6.दादू दयाल की वाणी, प्रेस प्रयाग, दयाबोध, दायी वार्ड, जेल प्रेस, जयपुर बेलबेरियल प्रिंटिंग वर्क्स, इलाहाबाद।
7.पल्टू साहब की वाणी, भाग 1,2,3 वे. प्रेस, प्रयाग, 1961.
8.मलूक दास की वाणी – वे. प्रेस, प्रयाग, 1961.
9.संत साहित्य – श्री भुवनेश्वर नाथ, माधव ग्रंथ माला कार्यालय, बांकीपुर, 1941.

10. हिन्दी संत काव्य में योगतत्व– डॉ. रवि कुमार, अमन प्रकाशन, कानपुर,
11.समकालीन कवि : एक अंतःसूत्र – डॉ. रतन कुमार पाण्डेय, विश्वविद्यालय प्रकाशन, चौक, वाराणसी, 2009–10
12.समाजदर्शन की भूमिका – डॉ. जगदीश सहाय श्रीवास्तव, विश्वविद्यालय प्रकाशन, चौक, वाराणसी, 2009–10.

सत्येन्द्र प्रकाश
(विषय हिन्दी) अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा(म प्र)

Publish Research Article
International Level Multidisciplinary Research Journal
For All Subjects

Dear Sir/Mam,

We invite unpublished Research Paper,Summary of Research Project,Theses,Books and Books Review for publication,you will be pleased to know that our journals are

Associated and Indexed,India

- Directory Of Research Journal Indexing
- International Scientific Journal Consortium Scientific
- OPEN J-GATE

Associated and Indexed,USA

- DOAJ
- EBSCO
- Crossref DOI
- Index Copernicus
- Publication Index
- Academic Journal Database
- Contemporary Research Index
- Academic Paper Databse
- Digital Journals Database
- Current Index to Scholarly Journals
- Elite Scientific Journal Archive
- Directory Of Academic Resources
- Scholar Journal Index
- Recent Science Index
- Scientific Resources Database

Review Of Research Journal
258/34 Raviwar Peth Solapur-413005,Maharashtra
Contact-9595359435
E-Mail-ayisrj@yahoo.in/ayisrj2011@gmail.com
Website : www.ror.isrj.org